शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मार्च 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

उषा प्रियंवदा की उपन्यास रचना : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. अनुपमा छाजेड़
प्राचार्या
श्री उमिया कन्या महाविद्यालय
इन्दौर, मध्यप्रदेश, भारत
वंदना बरमेचा (व्याख्याता हिन्दी)
गोविन्द गुरू राजकीय महाविद्यालय
बांसवाड़ा, राजस्थान, भारत

शोध संक्षेप

उषा प्रियंवदा की उपन्यास यात्रा जीवन के आसपास बिखरे हुए संसार का रचनात्मक संयोजन है जिसमें भीड़ के बीच कुछ चेहरे हैं और चेहरों के आसपास समय के सैलाब में एक अनवरत भीड़ है, जिसे अपनी जैविक संवेदना और नारी मन के कल्पनात्मक यथार्थ और यथार्थपरक कल्पना से जोड़कर रचनाकार ने अपने उपन्यासों का सृजन किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में उषा प्रियंवदा की उपन्यास रचना का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना

उषा प्रियंवदा अपनी रचना प्रक्रिया के सम्बन्ध में कहती हैं 'मेरी कहानियाँ और उपन्यास एक अप्रयासहीन, बेनसीब विचारों और कल्पना की उपज है।' वस्तुतः उपन्यास रचना एक असाधारण कार्य होता है जिसमें मानव जीवन की यथार्थपरक पर घटनाओं का संघर्ष पूर्ण जीवन चक्र निहित रहता है। किन्तु आधुनिक रचनाकार रचना तत्वों की आउट लाईन या ड्राफ्ट बनाना अनिवार्य नहीं मानता। कभी-कभी तो वह अपनी मानसिक यात्रा में उसे अंकित कर लेता है। इस मानसिक यात्रा में समय की कोई ऐसी सीमा नहीं हैं।"1 उषा प्रियंवदा की उपन्यास रचना के संदर्भ में उनका यह कथन रचना की विकास यात्रा के संदर्भ में विश्लेषण के अनेक आयाम खोलता है, जिसके माध्यम से उषा जी ने अपने रचना संसार का सृजन किया है। उनके शब्दों में "कहानी और उपन्यासों का कथाशिल्प, भाषा का विकास, यह सब सोचकर गढ़ना या पहले आउट लाईन बना लेना या एक-एक वाक्य या चरित्र अंकन पर बार-बार काम करना, या कई कई ड्राफ्ट बनाना यह सब मैं नहीं कर पाती। कोई घटना, कोई चरित्र, कोई चेहरा कोई सुनी हुई बात मैं अपने डेली जनरल में नोट कर लेती हूँ कभी वह भी नहीं और वह सब चरित्र, पात्र कथा, वार्तालाप हर समय मन के किसी कोने में कल्पना और सृजनात्मता की आँच में धीरे पकता रहता है। यदि कोई डेड लाईन नहीं है तो बहुत्सी कहानियाँ ऐसे ही खो जाती हैं, परन्तु यदि कोई डेड लाईन है तो मुझे मन में पैठकर कुछ निकालना पड़ता है।2

उषा प्रियंवदा की सृजनात्मक बनावट मनोवैज्ञानिक रचना धर्मिता के अनुरूप है। यही कारण है कि घटना, पात्र और शिल्प कुछ भी

योजनाबद्ध नहीं है, बल्कि वह अनेक मानसिक कल्पनाओं का, चेहरों और घटनाओं का स्वचलित चित्र है, जिसके बिखराव को रचनाकार ने अपनी मन स्थितियों के संदर्भ में एक अन्तभेदी सह सम्बन्ध के माध्यम से नियोजित किया है। आधुनिक जीवन की जटिलताओं में मानव व्यक्तित्व का रचनात्मक परिवेश मनोविज्ञान से गहरे तक जुड़ा है। व्यक्ति के भीतर और व्यक्ति के सम्बन्धों में जटिलताओं को समझने और लिखने में मनोविज्ञान उपन्यासकार को एक रहस्यलोक से परिचित कराता है, जहाँ सबकुछ पारदर्शी होने लगता है। चेतना प्रवाह की यह प्रक्रिया भी जो आज के मनोंवैज्ञानिक उपन्यासकारों में मिलती है, अपने अनुभवों का नए रूप में रचने की शक्ति देती है।"3 उषा प्रियंवदा की उपन्यास रचना के विश्लेषण के सन्दर्भ में सृजन की इन जटिलताओं पर विचार करना भी प्रासंगिक है।

उषा प्रियंवदा और उनके उपन्यास

उषा प्रियंवदा के प्रकाशित प्रमुख उपन्यास का विश्लेषण प्रस्तुत है। उन्होंने उपन्यास किसी न किसी दबाव में लिखे हैं। यह दबाव आंतरिक भी रहा है और बाहरी भी। सभी उपन्यास लघु आकार के हैं जो क्रमबद्ध रूप में लिखी एक लम्बी कहानी के समान भी लग सकते हैं। उनका 'शेष यात्रा' ही एक ऐसा उपन्यास है जो वास्तव में तीन-चार लेंग्थ नावेल्स का निचोड़ है। किन्तु वह भी लिखित रूप में काफी कट-छट गया है। "शेष यात्रा उनका सबसे परिपक्व उपन्यास है। इस प्रकार 'पचपन-खम्भे लाल दीवारें' और 'रूकोगी नहीं राधिका' इस परिपक्वता के पूर्व की उनकी संवेदना गतिशीलता का चित्र है, जिसमें रचनाकार ने नारी जीवन की यात्राओं के द्वन्द्वात्मक आयामों की रचना की हैं, जिसका समन्वय 'शेष यात्रा' में मिलता है।

रचनाकार के कथन और उनकी उपन्यास रचना के विश्लेषण के बाद जो सृजनात्मक केनवास उभरता है उसमें नारी और भारतीय समाज के विभिन्न चेहरे इस बात का प्रमाण नहीं देते कि उषा प्रियंवदा के उपन्यास बेनसीब विचारों और कल्पना की उपज हैं। 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' उपन्यास आज के भारतीय जीवन में विषम परिस्थितियों के बीच परंपरा और आधुनिकता के सांस्कृतिक द्वन्द्व में नारी के आंतरिक जीवन की गहरी त्रासदी का आलेख है। संयुक्त परिवार और उससे जुडे दायित्व की चेतना का जब नारी सामना करती है, तब उसका साक्षात्कार अपने अकेले व्यक्तित्व की अजनबी जटिलताओं से होता है। वह आत्मनिर्भर होकर कितनी स्वतंत्र है यह उसकी पूर्वदायित्वों में उभरे हुए घटनात्मक चित्रों और वर्तमान जीवन में जुड़ते हुए सजीव लोगों से अनुभव किया जा सक्ता है। यह कितनी गहरी त्रासदी है कि वह अपने अतीत और वर्तमान में से अपना अतीत चुन पाती है। सुषमा नील की होने की बजाय अपने पारिवारिक दायित्वों की होकर रह जाती है। सारा परिवेश कल्पना की ओर ले जाता है, लेकिन यह यर्थाथ की ही तो उपज है। नील के बगैर वह कुछ भी नहीं है। केवल एक छाया, एक खोए हुए स्वर की प्रतिध्वनि, मन की बिमारियों में भटकती हुई।'4 फिर भी वह इस सबकी बजाय अपने ही समाज के पचपन खम्भों और अपने ही मन की लाल दीवारों में घिरकर रह जाती है। इस उपन्यास में नारी का चित्र यथार्थ की जमीन पर प्रस्तुत किया गया है।"5 आज की नारी धैर्य की चारदीवारी तक सीमित नहीं है, बल्कि वह आत्म निर्भर होकर अपने सम्पूर्ण परिवार के दायित्व का निर्वाह भी

करती है। सुषमा आज की पीढ़ी की प्रतिनिधी है जो अपने दायित्वों को दूसरे के कंधे पर डालकर चुप नहीं बैठती, बल्कि, संकल्प शक्ति से इस सामाजिक दायित्वों को सारे व्यक्तिगत संघर्ष के बीच भी निभाती है। यह नई पीढ़ी के लिए सशक्त जीवन मूल्यों के पक्ष की बात होती-यदि सुषमा और नील का विवाह हो जाता। किंतु उषा प्रियंवदा ने जिस परिवेश को लिया है। उसमें सुषमा का निर्णय भारतीय जीवन रचना के बीच परंपरा और आधुनिकता के द्वन्द से जुड़ती नारी के यर्थाथ परक दृष्टिकोण का ही प्रतीक है।

'रूकोगी नहीं राधिका', 'पचपन खम्भे लाल दीवारे' के विकास क्रम में अगला उपन्यास है। जहाँ सुषमा की यात्रा समाप्त होती है वहीं राधिका की यात्रा आरम्भ होती है। इसे नारी के संदर्भ में एक खोज भी कहा गया है।6 इसमें भी एक मध्यमवर्गीय युवती की कथा है जो अपने अस्तित्व और स्वतंत्रता के बीच अनवरत नारी मन का अन्वेषण करती है। तो वह एक असमान्य पात्र के रूप में सामने आती है। जो अपने प्रेमी में पति नहीं पिता खोजती है। इसे मनोविज्ञान में इलेक्ट्रा ग्रंथि कहा गया है।7 रचनाकार ने यहाँ नारी के एक नये रूप की रचना की है। राधिका पारिवारिक, सामाजिक उत्तरदायित्वों और आर्थिक कठिनाइयों के बीच जुझते हुए अपने व्यक्तित्व का निर्माण करती है। डेनियल के साथ विदेश जाना, फिर भारत लौटकर अक्षय के साथ एक मानसिक रोगात्मक अनुबंध से जुड़ना और मनीष में एक समान धर्मा पुरूष की तलाश करना- सम्बन्धों के इस त्रिभुज में राधिका का चरित्र निर्मित हुआ है। किंतु उपन्यास रचना के आधार पर यह कहना प्रासंगिक है कि उषा प्रिंयवदा ने जो कुछ अनायास लिखा है वह यर्थाथ के धरातल पर अत्यंत स्वाभाविक मानसिक, परिवेश और आधुनिक बोध के अनुरूप है। वस्तुतः व्यक्ति पात्रों में उनके नारी पात्र परिस्थितियों के द्वारा एक विशेष संवेदना के बीच टाईप के समान लगते है।8 सुषमा और राधिका उस नारी वर्ग का प्रतीक है, जो उनकी वस्तु रचना के बीच एक विशिष्ट भारतीय सामाजिक परिवेश और आधुनिक मनोविज्ञान का प्रतिनिधित्व करती है। इस अर्थ में सुषमा और राधिका अलग-अलग होते हुए भी अलग-अलग नहीं है। अगर अंतर है तो केवल इतना कि एक पचपन खम्भे और लाल दीवारों के घेरे में है और दूसरी इस घेरे को तोड़ती है। वह रूकती नहीं है। सुषमा को उसके माता-पिता रोक लेते हैं, किन्तु राधिका को उसके पिता नहीं रोक पाते। राधिका की अपनी माँ नहीं है और फिर वह देश और विदेश के बीच भारतीय संस्कृति का एक सेत रूप बन गई है। राधिका जीवन की अर्थहीनता को पहचानती है।9 उसे सारे संबंध अप्रासंगिक नहीं लगते। इसका कारण केवल मनोवैज्ञानिक है क्योंकि वह पिता के प्यार को विभाजित होते न देख सकती है, और न सहन कर सकती है। राधिका को इस उपन्यास में नई अर्थवक्ता मिलती है। वह सुषमा की अपेक्षा अधिक मुक्त और विद्रोही है। सुषमा अकेलेपन से पीड़ित है लेकिन राधिका उसे तोड़ने को कटिबद्ध है।

'शेष यात्रा' को उषा प्रियंवदा एक संपूर्ण उपन्यास मानती है, जिसे एक उपन्यास के रूप में उन्होंने लिखा है। किन्तु इस उपन्यास में भी उनके पूर्व उपन्यासों की विकास यात्रा का अनवरत क्रम उपलब्ध हुआ है। इस उपन्यास को पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध में विभाजित किया है।10 पूर्वार्द्ध में नारी का परंपरागत आदर्शवादी रूप है और उत्तरार्ध में उसका आधुनिक और यथार्थवादी रूप मिलता है।

अनु के व्यक्तित्व का यह संक्रमित रूप अनेक दृष्टियों से रचनाकार की नारी के प्रति मूल्य भावना का ही विकसित रूप है। आधुनिक युग में स्वतंत्र होने के लिए अस्तित्ववान होना अनिवार्य है। जो अस्तित्ववान है वही अपने जीवन को प्रासंगिक बना सकता है। नारी की यही समझ पुरूष को भी संतुलित करती है। नारी व्यक्ति है, वस्तु नहीं। किन्तु मध्ययुगीन संस्कारों से ग्रस्त मध्यमवर्गीय भारतीय समाज में उसे वस्तु मान लिया गया है। प्रणव ऐसे इसी दृष्टि से स्वीकार भी करता है और उसके साथ व्यवहार भी। वह अनेक युवतियों से जुड़ा है और पत्नी उसके लिए केवल एक सामाजिक स्थिति और व्यक्तिगत भोग की वस्तु है। अनु अधिक समय तक यह सब सहन करती है किंतु प्रणव ही जब उससे अलग हो जाता है तब उसे इस अलगाव की त्रासदी में व्यक्तिगत दर्द के साथ ही एक नई सामाजिक प्रासंगिकता का अहसास भी होता है। नारी के इस आधुनिक बोध से नारी और पुरूष के संबंधों को अनु और दीपांकर के साथ ही प्रणव और नमिता के संबंधों में रचा गया है। यहाँ उस नारी का मोहभंग भी बड़ी कठिनाई से होता है क्योंकि वह यर्थाथपरखता को पहचानने पर भी अपने संस्कार से पीड़ित है। इसे हम भारतीय संदर्भ में उषा प्रियंवदा का सामाजिक यर्थाथवाद कर सकते हैं, क्योंकि अभी भी भारतीय नारी सांस्कृतिक मोह से जुड़ी हुई है।

रचना में नारी केन्द्र में है। किन्तु 'शेष यात्रा' उपन्यास तक उनकी यात्रा नारी और पुरूष के संबंधों को नारी की दृष्टि अपनी समग्र सांस्कृतिक सम्पदा और सामुहिक अवचेतन के संदर्भ में व्यक्तिगत चेतना के द्वन्द के साथ रची गई है। इन उपन्यासों में वस्तु ततव की प्रधानता नहीं हैं क्योंकि उनके उपन्यास के पात्र केन्द्रीत मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। पात्र रचना के सीमित केनवास पर उषाजी ने नारी के आधुनिक मनोविज्ञान और उसके सामाजिक यथार्थ के बीच के डाइलेक्टिक का प्रयोग किया है।

नदी उपन्यास में उषा प्रियंवदा ने आकाशगंगा के बहाने स्त्री-जीवन के कटु कठोर यथार्थ का मार्मिक चित्रण किया है। बस-बहने दो जीवन सरिता को कहीं न कहीं जल्दी या देरी से कोई न कोई हल तो निकलेगा। इसी सूत्र पर संपूर्ण उपन्यास लिखा गया है। नायिका का नाम ही आकाशगंगा रखना संपूर्णता का द्योतक है। यह उपन्यास की सार्थकता को दर्शाता है। इसमें आकाशगंगा लुटी-पिटी और छली गयी ऐसी महिला कि जो अपनी समझ और परिस्थिति के अनुसार जीवन का एक नया मार्ग स्वयं चुनती है और उस मार्ग पर उसे जो मिलता है उसे बिना किसी को दोष दिए स्वीकारती है। जीवन नाम हैं निरंतर प्रवाह का, निरंतर आगे बढ़ने का और निरंतर चलते जाने का उपन्यास 'अंतर्वंशी' में लेखिका उषा प्रियवंदा ने पति-पत्नी के संबंधों में शारीरिक शोषण की पीड़ा का चित्रण किया है। वाना और शिवेश के वैवाहिक संबंधों में रिक्तता आ जाती हैं। वाना कहती है नारी केवल संतान उत्पन्न करने का मात्र साधन समझी जाती है। उसकी इच्छा का कोई मोल नहीं है। जब चाहा उसका उपभोग किया ना मन किया तो अपमान कर अग्नि में झोंक दिया। वाना अपनी सहमि क्रिस्तीन से अपने दुःखों को साझा करती है। क्रिस्तीन वाना को दिलासा देते हुए कहती है कि, "मुझसे कहो न, वाना। क्या दुःख तुम्हे साल रहा है।"15 यहाँ वाना क्रिस्तीन को अपने और शिवेश के बारे में बताती है कि उसने कितनी यातनाएं सही हैं। यह दुःख और नहीं झेला जाता। वाना

शारीरिक एवं मानसिक रूप से पीडित है। इन उपन्यासों में नारी पात्र प्रमुख हैं, क्योंकि प्रत्येक उपन्यास किसी एक नारी पात्र का प्रतिनिधित्व करता है और यह नारी एक व्यक्ति की बजाय एक विशिष्ट वर्ग का प्रतिनिधि अधिक है। इन नारी पात्रों में उनके उपन्यासों के शीर्षकों की प्रतीकात्मकता भी संश्लिष्ट है। 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' की सुषमा माता-पिता से जुड़ी है, 'रुकोगी नहीं राधिका' की राधिका पिता से जुड़ी है। उसकी अपनी माँ नहीं है, विमाता है। और अनु के माता-पिता ही नहीं हैं। वह अपने प्रथम पुरूष में ही समग्र संवेदना और अपनत्व को समा देना चाहती है। इन अलग-अलग धरातलों पर पात्रगत मनोि वज्ञान के यर्थाथ को रचने का प्रयास किया गया है। सुषमा के लिए नील अपना सब कुछ अर्पित करने पर तत्पर है। राधिका दो पुरूषों के बीच एक में स्वयं को स्वीकार करने की अनुकुलता और आधुनिक दृष्टि पाती है। अनु प्रथम पुरूष के लिए केवल देह के स्तर पर ही नारी है और दूसरा पुरूष ही उसे मन के स्तर पर भी स्वीकार करता है। वही वाना कहती है नारी केवल संतान उत्पन्न करने का एकमात्र साधन है। आकाशगंगा तो क्रांति का नहीं नियति का दामन थामती है। इन स्थितियों में पात्रगत मानसिक चेतना विभिन्न पात्रों के चरित्र विकास में मनोविश्लेषण के अनेक आयामों में जुडती है। परंपरा और आधुनिकता के द्वन्द के बीच नारी और पुरूष संबंधों का द्वन्द भी इन उपन्यासों में चित्रित हुआ है। वस्तुतः यह द्वन्दनात्मकता ही उषा प्रियंवदा के उपन्यासों की अन्तर्यात्रा और उसके कथानक के विकास का कारण बनती है। इस प्रकार पात्र कथानक की रचना करते है, कथानक पात्रों की नहीं। यह मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों की विशिष्टता होती है, किन्तु उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में मनोविश्लेषणात्मकता के साथ ही मनोसामाजिक यथार्थ है। इस यथार्थ में उपन्यासकार जीवन का एक कैमरामैन की तरह फोटो ग्राफिक प्रस्तुतीकरण नहीं करता, बल्कि यथार्थ को अपनी विविध दृष्टि से अंकित करता है। जो उपन्यासकार यह करता है उसकी कृति जीवन के निकट होती है। 'पचपन खम्बे लाल दीवारे', 'रुकोगी नहीं राधिका' और 'शेष यात्रा', 'अंतर्वशी', नदी इन सभी उपन्यासों में नारी पात्रों का स्वतंत्र विकास मिलता है, किन्तु सभी पुरूष पात्र नारी संदर्भो में विकसित हुए हैं। नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण ही उनकी चरित्रगत विशिष्टताओं की रचना करता है। किन्तु नारी के चरित्र की विशेषताएँ पुरूषों के कारण नहीं उनकी अपनी चरित्रगत विशिष्टताओं के कारण है।11 इसका कारण यह है कि इन सभी उपन्यासों की रचना नारी को केन्द्र में रखकर नारी समाज और उसके मनोविज्ञान को लेकर हुई है। किसी न किसी रूप में से सभी नारी पात्र आधुनिकता और स्वतंत्रता के कारण अपने संघर्ष से अभिशप्त है। वह अपने जीवन के सारे कथाक्रम को घटनाओं के से जोड़ देती है। 'रूकोगी नहीं राधिका' में तो राधिका के प्रवास की सारी घटनाएँ पूर्व दीप्ति प्रणाली में ही चित्रित हैं।12 'शेष यात्रा' में भी अनेक स्थानों पर पूर्व दीप्ति का प्रयोग किया गया है। शेष यात्रा का सारा पूर्वार्द्ध पूर्व दीप्ति में ही है।13 इस प्रणाली के प्रयोग का कारण यह है कि घटनाएं मानस में घटती हैं और पूर्व की सारी घटनाएँ प्रत्य दृश्यों के रूप में सामने आती हैं। उषा प्रियंवदा ने माण्टाज की साहचर्यात्मक प्रणाली का भी प्रयोग कहीं-कहीं किया है। यह पूर्व दीप्ति से भिन्न है किन्तु विचार श्रृंखला जब लघुचित्रों के रूप में आती है तब इस अस्तव्यस्त क्रम में चलने वाले चित्र. कथा सूत्र को जोड़ते हैं।

इन मनौवैज्ञानिक प्रणालियों के माध्यम से विश्लेषण और संवाद को उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यासों में इस रूप में प्रस्तुत किया है कि उनमें नाटकीय शिल्प की अनेक संभावनाएँ समाविष्ट हो गई हैं। यह नाटकीयता पचपन खम्भे लाल दीवारें, रूकोगी नहीं राधिका और शेष यात्रा में मिलती है। इस शिल्प में दो पात्रों को आमने-सामने प्रस्तुत कर दिया जाता है। वस्तुतः उनके हर उपन्यास में नारी के सामने पुरूष और पुरूष के सामने नारी एक अभिनेता या अभिनेत्री के समान उपस्थित है। इस नाटकीय शिल्प के संयोजन का यह कारण है कि उपन्यास की नाटकियता एक विशिष्ट प्रभाव भी उत्पन्न करती है। यह नाटकीयता उनके उपन्यासों में फैलाव भी करती है। पात्रगत मनोविज्ञान के साथ ही उषा प्रियंवदा ने इस नाटकीयता का समावेश किया है, किन्तु उनके उपन्यास नाटकीय उपन्यास नहीं हैं, उनके उपन्यासों में नाटकीयता है। उनके उपन्यास मनोविश्लेषणात्मक होने के कारण चरित्र प्रधान उपन्यास ही हैं, किन्तु उन्होंने अनुभव और जीवन प्रणाली का समन्वय किया है, जिससे यह भ्रम उत्पन्न होता है। उनके सभी उपन्यासों में कहीं भी घटना और चरित्र एक दूसरे पर आरोपित नहीं है।

उषा प्रियंवदा ने शिल्प रचना की बजाय अपने पात्रों को कथानक के केनवास पर रूपायित किया है। इस कारण वे इस कथन के निकट हैं कि जब कथानक की गहराई न हो तभी उपन्यासकार शिल्प रचना में संलग्न रहता है। पात्रों का विश्लेषण घटनाओं के विकास के साथ उसका प्रभाव अपनी सारी समग्रता में अंकित करते हैं और संवाद मानसिक विचारों और घटनाओं को व्यक्त करते हुए अत्यंत नाटकीय संक्षिप्त और प्रासंगिक हैं। उपन्यास के कथानक में सामाजिक और मानवीय यथार्थ के साथ उषा प्रियंवदा ने कल्पना का जो प्रयोग किया है वह उसकी गतिशीलता का प्रतीक है। लघु उपन्यासों में यह शक्ति होना आवश्यक है कि वह अपने स्वरूप और संरचना में तीव्रता और उत्सुकता का समावेश करे। इसके लिए उपन्यास रचना का सारा दर्शन एक मनोबिम्ब और एक शब्द प्रतीक में व्यक्त होने की संभावाएँ होती हैं। पचपन खम्भें लाल दीवारें एक प्रतीक शब्द है, जिसके माध्यम से नायिका का सारा मनोबिम्ब, सामाजिक मनोविज्ञान के प्रवाह के रूप में रचा गया है। उपन्यासकार ने एक से इक्सीस तक शीर्षकों में एक क्रमबद्ध कथा का समानान्तर विकास किया है। यह शिल्प रुकोगी नहीं राधिका में अंक शीर्षकों से विहीन है, जिसमें कथ्य और पात्रगत मानसिकता बदलने के लिए शब्द क्रम के बीच सारे उपन्यास में हर जगह अंतराल का प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार किसी पात्र को लेकर उसके संदर्भ में सारी मनोदशा का निर्वाचन कर कथासूत्र का क्रम कई जगह जोड़ा गया है।16 अपने अंतिम उपन्यास 'शेष यात्रा' में यह क्रम बिना शीर्षकों और अन्तराल की पूर्ण रूप से विगत और वर्तमान की घटनाओं में विभाजित है।

इस विभाजन का आधार उपन्यास की नायिका है जिसके जीवन सूत्र में सारे कथासूत्र का समावेश कर दिया गया है। उपन्यासकार को वर्णन विस्तार में अधिक रूचि नहीं है, किन्तु कहीं कहीं वर्णन विस्तार है। उसका अभिप्रेत व्यक्तियों को परिस्थितियों के बीच देखना और परिस्थितियों के बीच व्यक्ति का जीना है। वस्तुतः उपन्यासकार, उसके जीवन और उसके समाज में उसकी मानसिकता की मनोरचना के कारण ही यह संभंव होता है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मार्च 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

उपसंहार

उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में शिल्प और भाषा भाविक संरचना और शिल्प प्रवाह की रासायनिक सावयविकता से निर्मित है। समकालीन जीवन दर्शन का व्यापक प्रभाव उषा प्रियंवदा पर पड़ा है। यही कारण है कि व्यक्ति मानव मूल्य के संदर्भ में अपनी अस्मिता की तलाश करता हुआ अपने साक्षात्कार के माध्यम से अपनी पहचान में संलग्न है। सुषमा का अवसाद, राधिका का भटकाव और अनु का अकेलापन इन सभी का निर्माण अपने अस्तित्व की जैविक और मनोवैज्ञानिक संभावना के बीच होता है। व्यक्ति समाज के बीच जो कुछ निर्मित करता है वह उसकी अपनी स्वतंत्र सत्ता की सजगता से उपजता है।

उषा प्रियंवदा प्रवासी भारतीय हैं, किन्तु उन्होंने अपने व्यापक अनुभवों और संवेदनाओं को भारतीय संस्कृति, परंपरा, आधुनिकता और जीवन के यथार्थ से जोड़ने की कोशिश की है। उन्होंने बहुत कम लिखा हैं किन्तु उनके अनुसार इसका कारण उनकी रचनात्मकता का चुकना नहीं है बल्कि समय की कमी है। वे भारत से दूर हैं और उनके प्रवास के बीच ही उनके सभी उपन्यासों का प्रकाशन हुआ।

उषा प्रियंवदा की उपन्यास रचना का सशक्त प्रश्न यह है कि ये आरंभ से अंत तक सारे मानवीय बिखराव को बांधकर उसे अपनी रचना की सजगता से प्रभावपूर्ण बनाती हैं किन्तु उनका केनवास सीमित है। उनकी दृष्टि स्पष्ट है और वे जो कुछ व्यक्त करना चाहती हैं उसके संदर्भ में सजग है। समस्त उपन्यास अलग-अलग कथानाकों में भी नारी-पुरूष संबंधों मध्यमवर्गीय नारी की समस्याओं और नारी के मनोसामाजिक आयामों का ही विकसित रूप है। उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यासों में उस 'सैकण्ड सैक्स' को केन्द्र में रखा है जिसकी और समकालीन शताब्दी के इस वैज्ञानिक समय में मनुष्य की संवेदना का रुझान हुआ है। जीवन को चलते हुए चित्रों के रूप में जिस आधुनिक समय में उषा प्रियंवदा ने रचा है वह भारतीय नारी का एक ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय आकार है जो उपन्यास की संरचनात्मकता के बाहर भी नारी को मनुष्य होने की अर्थवत्ता से सम्पन्न करता है। भारतीय परिवेश में उनके सभी उपन्यास नारी के इस मानवीय संवेदनात्मक संदर्भ के कारण अत्यंत मूल्यवान और प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. *उषा प्रियंवदा का पत्र अमेरिका से ममता बरमेचा को।*
2. *वही*
3 The Psychological Novel-,Leon Edel P.20
4. *पचपन खम्भे लाल दीवारें, उषा प्रियंवदा, पृष्ठ 123*
5. *हिन्दी लघु उपन्यास, घनश्याम मधुप, पृष्ठ 178*
6. *वही, पृष्ठ 180*
7. A Dictionary of Psychology, James Diever P. 81
8. *विवेक के रंग, डॉ.देवीशंकर अवस्थी पृष्ठ 379*
9. *रूकोगी नहीं राधिका, उषा प्रियंवदा, पृष्ठ 33*
10. *शेष यात्रा, उषा प्रियंवदा, पृष्ठ 103*
11. *पचपन खम्भे लाल दीवारें, उषा प्रियंवदा, पृष्ठ 127*
12. *रुकोगी नहीं राधिका, उषा प्रियंवदा पृष्ठ 34-35*
13. *शेष यात्रा, उषा प्रियंवदा, पृष्ठ 14*